# बच्चों में चरित्र-निर्माण : दिशा और दायित्व

☐ श्री उदय जारोली
प्राचार्य, ज्ञान मन्दिर महाविद्यालय,
नीमच (म० प्र०)

बच्चों के चरित्र-निर्माण के बारे में बहुत कुछ कहा जाता रहा है। बड़े अपने चरित्र की बजाय बच्चों के चरित्र की चिन्ता कर-करके थके जा रहे हैं। मानों चरित्र-निर्माण इन बड़ों द्वारा पाठ पढ़ाये जाने से ही हो जाएगा। बड़े बड़े मजबूर हैं। बड़ों का कहना है कि कानून ऐसे हैं कि सब कानूनों का पूरा-पूरा पालन करें तो धन्धा-रोजगार नहीं चल सकता। व्यापारी कहता है, सारी हिसाब की किताबें सफेद रखें और सारे कर चुकाएँ तो बच्चे भूखों मर जाएँ। अफसर कहता है कि यदि रिश्वत नहीं ले तो गुजारा मुश्किल है, लड़की का ब्याह कैसे करें? उद्योगपति उत्पादन में, आयात-निर्यात में घोटाला नहीं करे, एक्साइज की चोरी नहीं करे, कारखाना इन्सपैक्टर को घूस न दे, राजनैतिक दलों को चुपके-चुपके चन्दे नहीं दे तो उसका उद्योग ठप्प हो जाए। ट्रक और बस वाला गाड़ी कितनी ही अपटूडेट क्यों न रखे आर०टी०ओ० और पुलिस वाले चालान बनाएँगे ही। उनके भी बाल-बच्चे जो हैं। तो जितनी बेईमानी, भ्रष्टाचार, रिश्वत-घूस, छल-कपट, काला-बाजारी, कर-चोरी होती है वह सब बाल-बच्चेदार बाल-बच्चों के नाम पर करते हैं।

चरित्र का संकट, शायद, हर काल में रहा होगा तभी तो बार-बार महापुरुष जन्म लेते हैं, ईश्वर अवतरित होते हैं, भगवान-तीर्थंकर तारने आते हैं, संसार का पाप मिटाते हैं। इस काल में भी चारित्रिक अधःपतन हो रहा है तो कुछ भौतिक सुखवाद का प्रभाव है और कुछ काल का भी प्रभाव मानना चाहिए फिर भी हमें सोचना है कि अवगुणों के स्थान पर चारित्रिक गुणों की प्रतिष्ठा हो और गुणवान की गरिमा और महिमा हो।

हम सब बच्चों का चरित्र उच्च हो यह चाहते हैं, पर कौन-से बच्चों का? बच्चों के चरित्र-निर्माण में माँ क्या कर सकती है? मजदूर और किसान माँ बच्चे को पीठ पर लादकर मजदूरी करती है। माँ सड़क या खेत में काम करती है और बच्चे एक किनारे पर बिलखते रहते हैं। ये ही बच्चे कुछ बड़े होकर गाय, बकरी, ढोर चरा लाते हैं।

हजारों बच्चे फुटपाथों पर जन्म लेते हैं और वहीं जीवन पूरा कर लेते हैं। कहीं झुग्गी-झोंपड़ियों में पैदा होते हैं। स्टेशनों और बस-स्टेशनों के पास बने अनाधिकृत अड्डों पर जन्मते हैं। हम कौन से बच्चों के चरित्र-निर्माण की बात करें? उन बच्चों का चरित्र-निर्माण कौन कर सकता है? क्या माँ? नहीं। उसके पास न तो देने के लिए दाना है और न ही कपड़ा है, और न ही शिक्षा है, न स्वस्थ रखने के लिये कोई साधन है। इनमें से अधिकांश बच्चे अनपढ़ रह जाते हैं, और कुछ बूट पालिश करते हैं। कुछ अलग-अलग तरह से भीख माँगते हैं। कुछ चोरों-पाकेटमारों के जाल में फँसकर चोरी-पाकेटमारी करते हैं। बड़े होकर दादागीरी-गुण्डागीरी करते हैं। भीख माँगने वालों के बच्चे भी भीख माँगते हैं। छोटी लड़कियाँ शरीर दिखाकर भीख माँगती हैं। इन अभावग्रस्त-दुखियारे बच्चों के चरित्र-निर्माण की बात करना उन्हें शर्माना है।

कुछ मध्यमवर्गीय, छोटे-मोटे किसान, बड़े और संगठित मजदूर, नौकरी पेशा और मझले व्यापारियों को बच्चों के चरित्र निर्माण की चिन्ता कम और उनके धन्धे या नौकरी की चिन्ता अधिक रहती है। वे सोचते हैं, किसी भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकार से बच्चों का पालन-पोषण हो जाए और बच्चा नौकरी पर लग जाए। इन अभिभावकों को बच्चों के चरित्र-निर्माण की चिन्ता कहाँ रहती है ?

उच्च, मध्यमवर्गीय, उच्चकुलीन-अभिजात्य वर्ग के या बड़े व्यापारियों-उद्योगपतियों, अधिकारियों के बच्चों के चरित्र-निर्माण की बात सोचें पर इन्हें बच्चों का चरित्र कहाँ बनाना है ? ये जानते हैं कि ईमानदार, सत्यवादी, गुणवान, शीलवान और कर्मठ कार्यकर्ता तो भूखे मरते हैं। इन्हें चरित्र-निर्माण करके क्या बच्चों को भूखा मारना है ? अपना उद्योग-धन्धा चौपट करना है ? इन अभिभावकों का ध्येय बच्चों को अच्छे से अच्छे स्कूल, इंगलिश, बाल मन्दिर, फिर पब्लिक स्कूल में रखकर गिट-पिट सिखानी है, मैनर्स सिखाने हैं, काले शोषक अफसर बनाने हैं इसके लिए चरित्र कहाँ चाहिये ? इन्हें चाहिए ऊँची डिग्रियाँ। इन बच्चों की माताओं को फुरसत भी कहाँ है ? वे क्लब-सोसायटी में जायें या बच्चे का चरित्र-निर्माण करें ? बच्चे तो नौकर-नौकरानियाँ (वे भी तो मुफ्त के सरकारी खर्च पर मिलने वाले) पाल सकती हैं। इनके बच्चे तो 'क्लब' 'एबीसी' तो बाहर सीखते ही हैं हँगना-मूतना भी कान्वेन्ट और इंगलिश स्कूल में सीखते हैं। २५-५० रुपये खर्च किये महीने के और चरित्र-निर्माण से लगाकर सब कार्यों से मुक्ति पाए। ये आधुनिक माताएँ इन्हें भारतीय धर्म, दर्शन, संस्कृति, ज्ञान क्यों सिखाएँ ? क्या इन्हें दकियानूसी बनाना है ?

अभिभावकों में से पिता को लें तो प्रथमतः चरित्र-निर्माण का जिम्मा वह माँ पर छोड़ता है और फिर शिक्षक पर। उसे रोटी-अर्जन से ही फुर्सत नहीं मिलती। पिता के स्वयं के चरित्र का हवाला हम पहले दे चुके हैं। बच्चा घर में देखता है कि पिता को झूठ बोलना पड़ता है। बेईमानी और रिश्वत से ही अधिक पैसा आता दीखता है। काला बाजार और दो नम्बर से ही भवन बनते देखता है तो जिस घर में अन्न ही इस प्रकार का आता हो तो उस बच्चे को शिक्षक कितनी ही राम और हरिश्चन्द्र, महावीर और गौतम की कहानियाँ और नीति के पाठ बताएँ वह बच्चा नीतिवान और चरित्रवान नहीं बन सकता।

कुछ माता-पिता अपने काले कारनामों-धन्धों से दुःखी होकर बच्चों को उससे मुक्त करना चाहते हैं अतः उन्हें (उसी काले-पीले धन से) अच्छी शिक्षा और प्रशिक्षण दिलाना चाहते हैं पर वे बच्चे भी बिगड़ते देखे जाते हैं। आखिर काली कमाई का अन्न तो असर करेगा ही।

बच्चा घर के दूषित वातावरण में घुटे, घृणा-द्वेष कलह और लड़ाई-झगड़ों को झेले, टूटते-बिखरते परिवार के आश्रय में रहे तो इसका वहाँ दम घुटता है। वह बाहर आता है पर बाहर भी तो दम घोंटू वातावरण है ? कितनी विकृति है ? स्कूल-कॉलेजों में पढ़ने का वातावरण कम और उच्छृंखलता, दादागीरी-गुण्डागीरी हावी होती जा रही है। शिक्षक कौन से परिश्रमी ज्ञानवान और चरित्रवान् मिल रहे हैं ? यदि इक्के-दुक्के समर्पित व्यक्ति मिलते भी हैं तो वे बच्चे का चरित्र अत्यल्प प्रभावित कर पाते हैं। वैसे आज के शिक्षक का गुणवान, चरित्रवान होना आवश्यक कहाँ है ? चरित्र प्रमाण-पत्र तो सभी सरकारी-गैर सरकारी नौकरियों के लिए आवश्यक है पर आज तक किसी को 'दुश्चरित्र' है ऐसा प्रमाण-पत्र दिया जाता नहीं देखा। सारे शिक्षक इस प्रकार चरित्रवान हैं चाहे वे शिक्षण के साथ खेती-बाड़ी या अन्य धन्धे करते रहें और कक्षा में बच्चों का पोषण आहार स्वयं हजम कर जाएँ, चाहे धूम्रपान करें, चाहे शराब पीएँ, चाहे स्कूल-कॉलेज में गुटबन्दी और राजनीति चलाएँ। इनसे बच्चों का कौनसा चरित्र बनेगा ? बच्चा तो देखकर सीखता है चाहे शिक्षक कहते रहें कि "हमारे चरित्र की कमियाँ मत देखो, हमारे ज्ञान से सीखो"। फिर ज्ञान भी कौनसा ? सरकार द्वारा निर्धारित ज्ञान। अध्यात्म, धर्म, दर्शन, संस्कृति के पाठ पढ़ाना संविधान ने रोक रखा है। सरकार तो मात्र व्यावहारिक शिक्षा दिलाती है जिसका सम्बन्ध आजीविका से हो (हालाँकि वह भी नहीं हो रहा है)।

वह काल गया जब सामान्य जन से लगाकर राजा, महाराजा के बच्चे ऋषि-मुनियों के आश्रम में रहकर शास्त्रों और शस्त्रों की शिक्षा अर्जित करते थे। वह जमाना भी अभी-अभी गया जब माता-पिता बच्चे को स्कूल में भर्ती करते समय कहते थे—"माड़सा, इसका मांस-मांस आपका और हड्डी-हड्डी हमारी।" अब तो चाहे छात्र नहीं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पढ़े या उद्दंडता करे और शिक्षक हाथ भी लगा दे तो बच्चे के माँ-बाप लड़ने आ जाते हैं। सरकार और मनोवैज्ञानिक भी मना करते हैं। सब ओर भटककर अन्त में शिक्षा विभाग में आ टिकने वाला शिक्षक, अपनी घरेलू, आर्थिक, सामाजिक समस्याओं में उलझा हुआ, हताशा-निराशा में जी रहा न्यून वेतनभोगी, उपेक्षित शिक्षक बच्चों का चरित्र-निर्माण कैसे कर सकता है ?

माता-पिता, विद्यार्थी, शिक्षक, शिक्षण संस्था और सरकार, सबका लक्ष्य है कि शिक्षार्थी कक्षा में उत्तीर्ण हो जाय, डिग्री पा ले। उसके लिये कई तरीके हैं, कई हथकंडे हैं जिनके सहारे विद्यार्थी उत्तीर्ण हो जाता है। यदा-कदा शिक्षक भी उस हथकंडे में साथ देता है। चाहे भय से दे या लालच से दे। चरित्र वाले कालम में 'सामान्य' या 'ठीक' लिखना भी प्रधानाचार्य और प्राचार्य के लिये जोखिम का काम है चाहे विद्यार्थी दादा-गुण्डा ही क्यों न रहा हो और उसी के बल पर उत्तीर्ण क्यों न हुआ हो ?

शिक्षकों के अल्पज्ञान, प्रमाद, चारित्रिक कमजोरी, पक्षपात, गुटबन्दी, राजनीति एवं सिद्धान्तविहीनता के कारण आज बच्चे उन पर एवं शिक्षण संस्थाओं पर पत्थर बरसाने लगे हैं। समर्पित माने जाने वाले शिक्षक, विद्वान, आचार्य, कुशल प्राचार्य और कुलपति भी घुटने टेक रहे हैं। उन्हें अगली कक्षा में चढ़ा रहे हैं, परीक्षा आसान कर रहे हैं, डिग्रियाँ बाँट रहे हैं। इन सब शिक्षकों से बच्चों के चरित्र-निर्माण और भविष्य निर्माण की क्या अपेक्षा की जाए ?

आज बच्चों के चरित्र-निर्माण में माता-पिता और शिक्षक की भूमिका शून्यवत् है। वे आदर्श नहीं रहे हैं। आज बच्चों के लिये आदर्श हैं नेता और अभिनेता ! आज उनके आदर्श हैं सिनेमा के गंदे पोस्टर; गलियों में बजने वाले शराब के और प्यार के गाने; 'गुण्डा', बदमाश, डाकू, पाकेटमार नामक फिल्में; उनमें फिल्मायें जाने वाले ढिशुम्-ढिशुम्, अश्लील और वीभत्स दृश्य-चित्र; रहे-सहे में अश्लील-जासूसी उपन्यास, कहानियाँ, सत्यकथाएँ; फिल्मों और अभिनेताओं के व्यक्तिगत कार्य कलापों और रासलीलाओं से भरे पड़े सिने समाचार पत्र-पत्रिकाएँ। छोटे बच्चों को "ले जायेंगे-ले जायेंगे दिल वाले दुल्हनिया ले जायेंगे", "झूम बराबर झूम शराबी", "खाइ के पान"—"खुल्लम-खुल्ला प्यार करेंगे हम दोनों" आदि सैकड़ों लाइनें याद हैं। आज अंत्याक्षरी में सूर, तुलसी, मीरा, कबीर, निराला और महादेवी के पद वर्जित हैं जैसे पहले कभी सिनेमा के गाने वर्जित थे। महापुरुषों की जीवनी, इतिहास-पुरुषों के त्याग और उत्सर्ग की कहानियाँ आज के बच्चे को याद नहीं रहती पर सिनेमा के अभिनेता, अभिनेत्री के नाम-पते, उनके प्यार और विवाह के किस्से याद रहते हैं। किसका कितना नाप है याद रहता है, कौन किस-किस फिल्म में आ रहा है याद रहता है। इस वातावरण में बच्चों के चरित्र-निर्माण की क्या बात की जाय ?

दूसरे आदर्श हैं हमारे नेता ! जैसा दिल्ली दरबार में होता है या भोपाल या जयपुर आदि में होता है बच्चे उसकी नकल करते हैं। बच्चा देखता और सोचता है कि बिना पढ़े, बिना योग्यता के, बिना चारित्रिक गुणों के, परन्तु जोड़-तोड़ से शिखर पर पहुँचा जा सकता है। गाँव का बच्चा पंच-सरपंच के चुनावी अखाड़े देखता है। शहरी बच्चा भी चुनावी दंगल देखता है। स्कूल-कालेज में उसकी नकल उतारता है। दादागीरी-गुण्डागीरी, छल-कपट, प्रतिद्वन्दी को खरीदना, वोटर को खरीदना, यह सब बड़े नेताओं से सीखता है। बच्चा संसद व विधानसभाओं में जूते, चप्पल चलते देखता है, सुनता है, हाथापाई के समाचार सुनता है। सत्ता-प्राप्ति के लिए नेताओं का इधर से उधर उछलना-कुदना देखता है। वायदा-खिलाफी देखता है। सत्ता से पैसा, पैसे से सत्ता, सत्ता से सुख और पैसा—यह चक्र चलते देखता है। फिर नेताओं द्वारा लाखों-करोड़ों के घपले भी सुनता है; फिर भी उनका बाल-बाँका नहीं होता है यह भी जानता है। राजनेता फिर भी उजला ही दिखता है। यह दृश्यावली बच्चे के सामने गुजरती है; फिर उसका चरित्र कैसे बनेगा ? यह सब चलता रहे और बच्चे का चरित्र बन जायेगा यह कैसे सम्भव है ?

इन सिद्धान्तविहीन कुर्सी-दौड़ वालों से बच्चा कौन-सा चरित्र ले ? समाज के सर्वोच्च शिखर पर बैठे हुए समाज के ठेकेदारों, दो नंबरियों, काला-बाजारियों से बच्चा क्या सीखे ? सभी बच्चों को (११ वर्ष तक की आयु वालों को) निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा सरकार नहीं दे सकी। मन्त्रियों, अधिकारियों के बंगलों पर लाखों खर्च हो सकते हैं पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्कूलों में कमरे नहीं हैं, टाट पट्टियाँ नहीं हैं। बच्चों के स्कूल घुड़शाला से अधिक नहीं बन पाये। औषधालय बूचड़-खाने से अधिक नहीं बन पाये। समाज के कई लोगों के बच्चे अवैध रूप से सड़कों पर छोड़ दिये जाते हैं। बच्चे कुपोषण के शिकार हैं, बीमारियों से पीड़ित हैं, अभावों की जिन्दगी जीते हैं और फिर भी समाज के ठेकेदार और देश के कर्णधार इन्ही बच्चों को नीति और आदर्श का पाठ पढ़ाने के लिए धुँआधार भाषण झाड़ जाते हैं।

सरकार ने संविधान के अनुच्छेद २३ के प्रावधान का पालन करते हुए १४ वर्ष से कम के शिशुओं को कारखानों और खतरनाक कामों पर नियुक्त करने पर रोक लगा दी है पर आज भी कई बच्चे ऐसे काम करते हैं। कई छोटे बच्चे ठेला चलाते हैं, हम्माली करते हैं, साइकिल रिक्शा चलाते हैं। कई कानून बन गये पर होटलों में सुबह से रात्रि तक काम करने वाले छोटे-छोटे बच्चों को राहत नहीं दिला सके। बच्चों के नियोजन पर रोक का कानून १९३९ से ही बन गया, उसमें कई उद्योग, व्यापार, व्यवसाय सम्मिलित कर लिये गये, अभी १९७९ में रेलवे ठेकेदारों को भी इसमें लिया गया पर क्या बच्चों का नियोजन रुका ? नहीं। बच्चों का व्यापार घोर दण्डनीय अपराध है फिर भी होता है। अपहरण होते हैं। छोटे-छोटे बच्चे पाकिटमार, चोर-गिरोहों में चले जाते हैं। छोटी-छोटी बच्चियाँ कोठे की शरण में पहुँच जाती हैं। चोपड़ा बच्चे-हत्याकाण्ड सरीखे हत्याकाण्ड होते हैं, गाँव-शहर सब ओर बलात्कार भी होते हैं। समाज द्वारा बनाई हुई या सरकार की इस कुव्यवस्था, कानूनी दुर्व्यवस्था में हम बच्चों के चरित्र की बात किस मुँह से करें ?

भिक्षावृत्ति पर रोक है। मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र आदि राज्यों में वर्षों पूर्व से कड़े कानून बने हुए हैं पर स्टेशनों पर, डिब्बों में, सड़कों-फुटपाथों पर, बड़े-बड़े तीर्थ-स्थानों पर छोटे बच्चे भीख माँगते, अकुलाते दिखाई देते हैं। धार्मिक स्थानों पर लाखों-करोड़ों रुपये मन्दिरों, मस्जिदों, यज्ञ-हवन, भोजन पर खर्च हो जाते हैं पर वहीं छोटे-छोटे बच्चे अन्न के लिए तरसते मिल जायेंगे। हम इस समाज से बच्चों के चरित्र में किस भूमिका की बात करें ?

भीड़ भरी बसों, ट्रेनों में बच्चे भेड़ बकरी सरीखे जाते हैं। बच्चे वाली महिलाएँ भी खड़ी-खड़ी पिसती चली जाती हैं। बच्चों के बारे में किसे चिन्ता है ?

सरकार ने बाल-विवाहों की बुराई देखकर पचास वर्ष पूर्व कानून बनाया पर क्या उससे बाल-विवाह रुक पाए ? नहीं। टूटे-बिखरे परिवारों के बच्चों के लिए समाज और सरकार ने क्या व्यवस्था की ? अब तो इन कानूनों को सरकार में बैठे मंत्री भी तोड़ने लगे हैं, तो दूसरों से क्या अपेक्षा रखें ?

इतना सब होते हुए भी इस दुश्चक्र से निकालकर बच्चों के चरित्र-निर्माण पर सर्वाधिक ध्यान देना होगा। तभी चारित्रिक अधःपतन से उत्पन्न सामाजिक विकृति से निजात पा सकते हैं। इसलिए अभिभावक, शिक्षक और समाज और स्वयं को बदलना होगा और तब कुछ परिवर्तन हो सकेगा। हम बच्चों के चरित्र-निर्माण में क्या भूमिका निभाएँ, पहले उक्त वर्णित परिस्थितियों को बदलें और कुछ ठोस कार्य करें।

इस पृष्ठभूमि में हम सोचें कि बच्चे के चरित्र-निर्माण में अभिभावक की भूमिका कितनी अहम है ? इनमें से माँ का प्रभाव बच्चे के चरित्र पर सर्वाधिक पड़ता है। गर्भावस्था से ही शिशु का मन प्रभावित होता है। आज की महिला चाहे माने या न माने पर मनोवैज्ञानिक अब 'अभिमन्यु का गर्भ में ज्ञान' सिद्धान्त मानने लगे हैं। साम्यवादी देशों में 'ब्रेन वाशिंग' गर्भवती माँ को पाठ पढ़ाकर ही किया जा रहा है। हमारे धर्मशास्त्रों में इसके किस्से पाये जाते हैं कि गर्भस्थ शिशु अपनी माँ एवं सबको प्रभावित करता है और माँ भी बच्चे का विशेष ध्यान रखती है। उस काल में उसका आचार-विचार शुद्ध और उच्च हो। सद्साहित्य का वाचन-श्रवण करे। माँ आर्थिक-मानसिक-व्यथाओं, विग्रहों, कुण्ठाओं से दूर रहे। काम-क्रोध से परे रहे। सरल और सौख्य जीवन यापन करे।

इस हेतु समाज-सेवी, धार्मिक संस्थाओं को विशिष्ट साहित्य उपलब्ध कराना चाहिये। प्राचीन साहित्य एवं नीति कथाएँ उपलब्ध हैं। इनका विशेष प्रचार-प्रसार होना चाहिये। समाजसेवी संस्थाओं एवं ग्रन्थालयों से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऐसा साहित्य गर्भवती माँ तक पढ़ने के लिये पहुँचाना चाहिये। धर्मगुरुओं को ऐसे उपदेश देने चाहिये और सद् साहित्य वाचन एवं श्रवण की प्रवृत्ति बढ़ानी चाहिये।

सरकार का विशेष दायित्व है कि शिशु शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ जन्में और स्वस्थ विकसित हों। इस हेतु औषधालयों की लापरवाही रोकी जानी चाहिये। बाल्यकाल में शिशु का पोषण एवं प्रशिक्षण स्वस्थ हों, इस हेतु सरकार के साथ समाजसेवी संस्थाओं को भी सुविधाएँ प्रदान करनी चाहिये।

माँ का पुनीत कर्त्तव्य है कि उसके बच्चे नीतिवान, ईमानदार, कर्त्तव्यनिष्ठ, परिश्रमी, साहसी और चरित्रवान बनें। हर माँ शायद वैसा चाहती है पर केवल लाड़-प्यार एवं खूब अच्छा खिलाने, पहनाने से वह वैसा नहीं बन जाता। अन्तर्मन में ममता पर बाह्य में कठोर रहते हुए शिक्षा एवं संस्कार देने होंगे। शिक्षित माताएँ छोटे-छोटे बच्चों को बाल मन्दिर में ढकेलकर उन्हें ममताविहीन नहीं करें अपितु स्वयं पढ़ायें। इस आयु में उसकी बहुत सी आदतें सुधारी जा सकती हैं। नौकर या बालमन्दिर वालों से अच्छे चरित्र और संस्कारों की कल्पना करना व्यर्थ है। बच्चा प्रथमतः माँ को आदर्श मानकर आचरण करेगा। वह माँ के गुण-अवगुण, आचार-विचार से अत्यधिक प्रभावित होता है अतः माँ को अवगुणों से दूर, द्वेष-कलह से परे आचरण करना होगा। बच्चे को अन्याय-अत्याचार का मुकाबला करने की सीख देनी होगी। व्यावहारिक शिक्षा के साथ उसे कुछ आध्यात्मिक बातें बातों-बातों में बतानी चाहिये। बच्चा बड़ी उत्सुकता से स्वयं के आगमन-गमन, पृथ्वी, आकाश, प्रकृति के बारे में जानना चाहता है तभी उसे कुछ आत्मिक ज्ञान दिया जा सकता है। नासमझ समझकर टालना या झिड़की देना उसमें कुण्ठाएँ उत्पन्न करता है। यदि माँ नित्य-नियम, समता-सामायिक, पूजन-अर्चन-दर्शन करती हो, साधनामयी जीवन जीती हो तो बच्चा उससे अवश्य प्रभावित होगा। वह स्वयं सीख लेगा।

सम्पन्न माँताएँ समझा सकती हैं कि अन्न एवं अन्य वस्तुओं का अपव्यय न हो चूँकि लाखों बच्चे अध-पेट रहते हैं। इससे अपव्यय भी रुकेगा और इस सामाजिक अव्यवस्था के प्रति बच्चे में चिन्तन जगेगा, उसके विरुद्ध विद्रोह भड़केगा। ऊँच-नीच क्यों है---नहीं होना चाहिये, मृत्यु-भोज बुरा है, तिलक, दहेज बुरा है आदि बातें समझाकर इन बुराइयों के प्रति भावना माँ ही जगा सकती है। ऋषि-मुनियों, वीरों, योद्धाओं, शहीदों के कहानी-किस्से माँ बात-बात में बता सकती है। पुतलीबाई से हरिश्चन्द्र की कहानी सुनकर मोहनदास, महात्मा गाँधी बन गये तो क्या अब ऐसा सम्भव नहीं है। आज माताएँ उन्हें स्वयं कुछ सिखाने की बजाय रोते-बिलखते भी जबरन कई घण्टों के लिये बाल-मन्दिरों या इंग्लिश स्कूलों में भेजकर पिण्ड छुड़ाती हैं। माँ सबसे बड़ा गुरु माना गया है तो क्या वह पुस्तकों में लिखा रहने के लिये है? धर्म और नीति का पाठ माँ से अच्छा और कोई नहीं सिखा सकता है।

'सदा सच बोलो' हजार बार लिखाने से भी वह सत्य बोलना नहीं सीखेगा यदि वह पारिवारिक और सामाजिक समव्यवहार में सत्य की हार होते देखेगा। अतः माँ-बाप का कर्त्तव्य है कि उनका आचरण नीतिमय हो, धर्ममय हो। उनके विचार उच्च हों। वे सादगी से और सन्तुलित जीवन-यापन करें। स्वयं वैर, वैमनस्य, काम, क्रोध, लोभ आदि विकारों से हटकर जीवन जीयें तब हम पायेंगे कि बच्चे भी चरित्रवान बन रहे हैं। हम बच्चों को सीख दें उससे पहले स्वयं सीख लेने को तैयार रहें तो सुधार के आसार दीखेंगे। अभावग्रस्त जीवन जीने वाले माता-पिता भी अपना उच्च जीवन रखते हुए बच्चों को संस्कारयुक्त बना सकते हैं। सामाजिक विषमता से पीड़ित होने के कारण वे इस व्यवस्था से लड़ने के लिये बच्चे को अधिक जुझारू बना सकते हैं। पिता को स्वयं चरित्र एवं गुणों का आदर्श उपस्थित करना होगा। आचरण और कर्म द्वारा पाठ पढ़ाना होगा कि भूखे मर जायें पर बेईमानी और अन्याय नहीं करेंगे, न सहेंगे।

जहाँ अभिभावक अशिक्षित, गरीब और साधनहीन हों वहाँ बच्चों के चरित्र-निर्माण में शिक्षक की भूमिका बढ़ जाती है। बच्चे शिक्षक के आचार-विचार, भाषण-सम्भाषण, रहन-सहन, आदतों से भी शिक्षा ग्रहण करते हैं या आदतें बिगाड़ लेते हैं। आज भी कुछ शिक्षक कई बच्चों के लिये प्रेरणास्रोत एवं आदर्श प्रतिमान होते हैं अतः शिक्षक को अपना जीवन संयमित, नियन्त्रित रखते हुए बच्चों के समक्ष आदर्श उपस्थित करना होगा। आदेश, उपदेश

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के पीछे, शिक्षक के चरित्र एवं विद्वत्ता का जोर हो तो बच्चों पर त्वरित असर पड़ेगा, अन्यथा शिक्षक भी असम्मान का भागी होगा और बच्चों को भी कई दुर्गुणों एवं दुर्व्यसनों में फँसा सकता है। शिक्षक का निजी और सार्वजनिक जीवन अलग-अलग नहीं हो सकता है। प्राथमिक और माध्यमिक स्तर तक के बच्चे तो शिक्षक के चरित्र एवं संस्कार से ही कुछ सीख लेते हैं। अतः शिक्षकों को वैयक्तिक एवं पारिवारिक स्वार्थों, दुराग्रहों से ऊपर उठकर समर्पण की भावना से कार्य करते हुए शिक्षा देनी होगी. जो केवल आजीविका के लिये ही पर्याप्त न हो अपितु बच्चों को एक सही जीवन-दर्शन भी दे सके।

व्यावहारिक शिक्षा का प्रसार इतनी तेजी से हो रहा है कि भारी संख्या में गुणसम्पन्न शिक्षक नहीं मिल सकते। संसार के पास इसके लिये कोई मापदण्ड भी नहीं है। इसीलिये पारमार्थिक एवं समाज-सेवी संस्थाओं एवं व्यक्तियों को अधिकाधिक प्राथमिक-माध्यमिक शिक्षण अपने हाथ में लेना चाहिये जिनमें व्यावहारिक ज्ञान के साथ-साथ ही नीति-शिक्षा भी दी जा सके। इन संस्थाओं में उच्च संस्कारयुक्त सेवाभावी शिक्षक नियुक्त किये जा सकते हैं। ऐसी समाजसेवी संस्थाएँ ही मेधावी, अध्ययनशील, त्यागमय, जीवन वाले उच्च विचारशील शिक्षकों को प्रश्रय देकर अधिकाधिक बच्चों को संस्कारित करने का दायित्व पूरा कर सकती हैं। समर्पित शिक्षक हजारों लाखों बच्चों का मानस परिवर्तन कर पूरी सामाजिक राजनैतिक सुव्यवस्था का सूत्रपात कर सकते हैं।

ऐसे शिक्षक आकर्षक सद्साहित्य की रचना कर सकते हैं। वैसे जहाँ पाठ्य-पुस्तकें और कापियाँ भी उपलब्ध न हों वहाँ अतिरिक्त पाठन सामग्री उपलब्ध कराना कठिन होगा। यद्यपि समाज एवं संस्थाएँ लाखों रुपये कई गतिविधियों पर व्यय करती हैं परन्तु बच्चों के साहित्य पर ध्यान नहीं दिया गया है। जब उन्हें सस्ते मूल्य में सद्साहित्य नहीं मिलता तो वे सिने-पत्रिकाएँ और सस्ता अश्लील साहित्य चुन लेते हैं। अतः समाजसेवी संस्थाओं और विद्यालयों के शिक्षकों, विद्वानों द्वारा बच्चों के लिए अच्छे साहित्य की रचना और प्रकाशन होना चाहिए।

साधनहीन, निराश्रित, अनाथ, फुटपाथों, झुग्गी-झोंपड़ियों में पैदा होने, पलने वाले बच्चों को संस्कारित करने के लिए पारमार्थिक और समाजसेवी संस्थाओं को जिम्मा लेना होगा। इसमें कई पढ़े-लिखे युवक, शिक्षक नौकरी पेशा लोगों की मानद सेवा ली जा सकती है। पहले छोटी-छोटी पाठशालाएँ खोली जा सकती हैं। इन बच्चों को शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार के भोजन की आवश्यकता है। यदि मानव समाज-सेवी संस्थाएँ यह कार्य हाथ में लें तो कई प्रकार की शासकीय स्कीमों से अनुदान और सहायता भी प्राप्त हो सकती है। हजारों-लाखों के रुपये दान देने या लाखों-करोड़ों रुपये मन्दिरों व पहाड़ों पर या चातुर्मासों पर खर्च करने की बजाय जीते-जागते इन बालकों पर खर्च होने चाहिए। समाजसेवी और धार्मिक संस्थाएँ साम्प्रदायिक और आम्नायों के संकीर्ण घेरे से निकलकर इन विपन्न बालकों को शिक्षा दे सकती हैं। इससे कई बच्चे जो भीख माँगने पर मजबूर हो जाते हैं, होटल या दुकान पर या मण्डी में हम्माली करते हैं, या पाकिटमार या उच्चकों की गिरफ्त में चले जाते हैं, उनसे मुक्त होकर इन्हीं स्कूलों में पढ़कर संस्कारित हो जायेंगे और सम्मानपूर्ण जीवन जी सकेंगे। इस हेतु कर्मठ संस्थाओं एवं निःस्वार्थ समाजसेवियों की आवश्यकता होगी।

समाज और सरकार यदि इन अभावग्रस्त हजारों-लाखों बच्चों के प्रति बेखबर रहती है और ये बच्चे बिगड़ते हैं तो पूरे समाज का चरित्र प्रभावित होगा। साधन-सम्पन्न एवं विपन्न बच्चों की खाई बढ़ती गई तो भयंकर संघर्ष और विस्फोट की स्थिति निर्मित हो सकती है, जिसे संभालना समाज एवं सरकार के लिए कठिन होगा। अतः इन बच्चों को शिक्षा एवं संस्कार देने के लिये सामाजिक संस्थाओं को विशेष व्यवस्था करनी चाहिये।

कानून बनवाकर या बनाकर समाज और सरकार अपने कर्तव्य की इतिश्री नहीं मान लें। यदि हमें भावी पीढ़ी के चरित्र एवं भविष्य की चिन्ता है तो बच्चों को खतरनाक, बोझिल, उबाऊ कार्यों और क्रियाओं में काम करने से रोकना होगा। बच्चे को संस्कारित करने के लिये स्कूल भेजने की बजाय गाय, ढोर चराना या खेत की रखवाली अधिक लाभप्रद है। ऐसे स्कूलों की व्यवस्था करनी होगी कि बच्चा पढ़ भी सके और माँ-बाप के काम में कुछ हाथ भी बँटा सके।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बच्चों की हत्याएँ, अपहरण, बलात्कार होते रहें, यह शर्मनाक है। इसके लिये कठोर दण्ड की व्यवस्था होनी चाहिये और दण्ड दिलानेवाली पृथक पुलिस इकाई होनी चाहिये। रेलों-बसों में बच्चों एवं बच्चे वाली माँ को प्रथम आसन मिलना चाहिये। हमें कुछ साधारण सहिष्णुता के नियम पुनः स्थापित करने होंगे।

बच्चों में अपराधवृत्ति कम करने के लिये इसकी जड़, अभावों की जिन्दगी और अशिक्षा को दूर करना होगा। केवल इंगलिश कानून की नकल करते हुए, 'प्रॉबेशन आफ आफेन्डर्स एक्ट' 'प्रॉबेशन कोड' और सुधारगृह बना देने मात्र से काम पूरा नहीं हो जायेगा। बच्चों को पढ़ने के निःशुल्क साधन और सुविधाएँ देनी होंगी। इन्हें बदमाशों, चोर, उचक्कों, पाकेटमारों के चंगुल से बचाना होगा। इनके अड्डों को समाप्त करना होगा। पुलिस की मिलीभगत पर चोट करनी होगी। जो छोटे-छोटे बच्चे इनके चंगुल से मुक्त हो जाएँ उनके शिक्षण-प्रशिक्षण के लिये समाजसेवी संस्थाओं को स्कूल की सुविधा और साधन देने होंगे। व्यावहारिक शिक्षा के साथ इन्हें सम्प्रदाय-निरपेक्ष आध्यात्मिक चिन्तन भी दिया जा सकता है।

रेडियो और सिनेमा का उपयोग शिक्षा एवं स्वस्थ मनोरंजन के लिये होना चाहिये। सिनेमा में बीभत्स, भौंडे और डरावने दृश्यों पर रोक लगानी चाहिये। इस हेतु सिनेमा कानून में परिवर्तन की आवश्यकता है। शराब और नशीली वस्तुओं के चित्र प्रदर्शित नहीं होने चाहिये एवं ऐसे गानों का गली बाजारों में बजना सख्ती से रोका जाना चाहिये। बच्चों के लिये शिक्षाप्रद और मनोरंजक फिल्में बननी चाहिये जिससे बच्चों को जीवन की शिक्षा मिले।

अश्लील साहित्य के प्रचार-प्रसार पर भारतीय दण्ड संहिता में रोक लगी हुई है परन्तु 'अश्लील' की परिभाषा नहीं दी गई है। बच्चों के कच्चे मन और मस्तिष्क को प्रभावित करने वाले साहित्य का प्रकाशन एवं विक्रय धड़ल्ले से हो रहा है। इसमें पुलिस भी मिली रहती है। अभिभावकों और शिक्षकों का कर्त्तव्य है कि बच्चे को ऐसे साहित्य के पठन से बचायें और उसके हाथों में सद्साहित्य दें। सरकार को अश्लील साहित्य पर तुरन्त रोक लगानी चाहिये। समाज सेवक और संस्थाएँ पिकेटिंग एवं अन्य माध्यमों से ऐसे साहित्य बेचने वालों पर पुलिस कार्यवाही करवाकर दण्ड दिलवा सकती हैं।

समाज के ठेकेदारों और राजनेताओं को अपना चरित्र एवं व्यवहार बदलना होगा। धनार्जन के काले रास्ते बन्द होने चाहिये। राजनेता और धनपतियों को सत्ता-लोलुपता और धन-प्राप्ति की राजनीति छोड़कर समाज एवं देश-हित की राजनीति में रहना चाहिए तभी बच्चों के चरित्र पर अनुकूल प्रभाव पड़ सकता है। बच्चों एवं विद्यार्थियों को चरित्र के लैक्चर झाड़ने के बजाय स्वयं चरित्रवान् और नीतिवान् बनकर व्यवहार करना होगा।

चुनावी प्रचार में बच्चों का दुरुपयोग कानून द्वारा रोका जाना चाहिये। इस हेतु जन प्रतिनिधित्व कानून में संशोधन कर बच्चों द्वारा प्रचार करवाना प्रतिबन्धित एवं दण्डनीय घोषित होना चाहिये।

□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org